[१०]

अथोपनयन*-संस्कारविधिं वक्ष्यामः

अत्र प्रमाणानि–

अष्टमे वर्षे ब्राह्मणमुपनयेत् ॥१॥ गर्भाष्टमे वा ॥२॥
एकादशे क्षत्रियम् ॥३॥ द्वादशे वैश्यम् ॥४॥
आषोडशाद् ब्राह्मणस्यानतीतः कालः ॥५॥
आद्वाविंशात् क्षत्रियस्य, आचतुर्विंशाद् वैश्यस्य, अत ऊर्ध्वं पतितसावित्रीका भवन्ति ॥६॥

–यह आश्वलायन गृह्यसूत्र का प्रमाण है ॥

इसी प्रकार पारस्करादि गृह्यसूत्रों का भी प्रमाण है ॥

अर्थ–जिस दिन जन्म हुआ हो, अथवा जिस दिन गर्भ रहा हो, उस से ८ आठवें वर्ष में ब्राह्मण के, जन्म वा गर्भ से ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रिय के और जन्म वा गर्भ से बारहवें वर्ष में वैश्य के बालक का यज्ञोपवीत करें तथा ब्राह्मण के १६ सोलह, क्षत्रिय के २२ बाईस, और वैश्य के बालक का २४ चौबीसवें वर्ष से पूर्व-पूर्व यज्ञोपवीत होना चाहिये । यदि पूर्वोक्त काल में इन का यज्ञोपवीत न हो तो वे पतित माने जावें ।

श्लोक– **ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे ।**
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे ॥

–यह मनुस्मृति का वचन है ।

जिस को शीघ्र विद्या, बल और व्यवहार करने की इच्छा हो और बालक भी पढ़ने में समर्थ हुए हों तो ब्राह्मण के लड़के का जन्म वा गर्भ से पांचवें, क्षत्रिय के लड़के का जन्म वा गर्भ से छठे और वैश्य के लड़के का जन्म वा गर्भ से आठवें वर्ष में यज्ञोपवीत करें ।

परन्तु यह बात तब सम्भव है कि जब बालक की माता और पिता का विवाह पूर्ण ब्रह्मचर्य के पश्चात् हुआ होवे । उन्हीं के ऐसे उत्तम बालक, श्रेष्ठबुद्धि और शीघ्रसमर्थ बढ़नेवाले होते हैं । जब बालक का शरीर और बुद्धि ऐसी हो कि अब यह पढ़ने के योग्य हुआ, तभी यज्ञोपवीत करा देवें।

यज्ञोपवीत का समय–उत्तरायण सूर्य, और–

---

* उप नाम समीप नयन अर्थात् प्राप्त करना वा होना ॥

वसन्ते ब्राह्मणमुपनयेत् । ग्रीष्मे राजन्यम् ।
शरदि वैश्यम् । सर्वकालमेके ॥ —यह शतपथब्राह्मण का वचन है ॥

अर्थ—ब्राह्मण का वसन्त, क्षत्रिय का ग्रीष्म और वैश्य का शरद् ऋतु में यज्ञोपवीत करें । अथवा सब ऋतुओं में उपनयन हो सकता है और इस का प्रातःकाल ही समय है ।

पयोव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्यः॥
—यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है ॥

जिस दिन बालक का यज्ञोपवीत करना हो, उस से तीन दिन अथवा एक दिन पूर्व तीन वा एक व्रत बालक को कराना चाहिये। उन व्रतों में ब्राह्मण का लड़का एक वार वा अनेक वार दुग्धपान, क्षत्रिय का लड़का 'यवागू' अर्थात् यव को मोटा दलके गुड़ के साथ पतली, जैसी कि कढ़ी होती है, वैसी बनाकर पिलावें । और 'आमिक्षा' अर्थात् जिस को श्रीखण्ड वा सिखण्ड कहते हैं, वैसी जो दही चौगुना, दूध एक गुना तथा यथायोग्य खांड केसर डालके कपड़े में छानकर बनाया जाता है, उस को वैश्य का लड़का पीके व्रत करे, अर्थात् जब-जब लड़कों को भूख लगे, तब-तब तीनों वर्णों के लड़के इन तीनों पदार्थों ही का सेवन करें, अन्य पदार्थ कुछ न खावें-पीवें ।

विधि—अब जिस दिन उपनयन करना हो, उस के पूर्व दिन में सब सामग्री इकट्ठी कर याथातथ्य शोधन आदि कर लेवे । और उस दिन पृष्ठ ४-२४वें तक सब कुण्ड के समीप सामग्री धर, प्रातःकाल बालक का क्षौर करा, शुद्ध जल से स्नान करावे । उत्तम वस्त्र पहिना, यज्ञमण्डप में पिता वा आचार्य बालक को मिष्टान्नादि का भोजन कराके, वेदी के पश्चिम भाग में सुन्दर आसन पर पूर्वाभिमुख बैठावे और बालक का पिता और पृष्ठ १७-१८ में लिखे प्रमाणे ऋत्विज् लोग भी पूर्वोक्त प्रकार अपने-अपने आसन पर बैठ, यथावत् **आचमनादि** क्रिया करें।

पश्चात् कार्यकर्त्ता बालक के मुख से—

ब्रह्मचर्यमागाम्, ब्रह्मचार्यसानि ॥

ये वचन बुलवाके आचार्य*—

---

* 'आचार्य' उस को कहते हैं कि जो साङ्गोपाङ्ग वेदों के शब्द अर्थ सम्बन्ध और क्रिया का जाननेहारा, छल-कपट-रहित, अतिप्रेम से सब को विद्या का दाता, परोपकारी, तन-मन और धन से सब को सुख बढ़ाने में तत्पर, महाशय, पक्षपात किसी का न करे, और सत्योपदेष्टा, सब का हितैषी, धर्मात्मा, जितेन्द्रिय होवे ॥

ओं येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम् ।
तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे ॥

इस मन्त्र को बोलके बालक को सुन्दर वस्त्र और उपवस्त्र पहिनावे। पश्चात् बालक आचार्य के सम्मुख बैठे और यज्ञोपवीत हाथ में लेके–

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥१॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥२॥

इन मन्त्रों को बोलके आचार्य बायें स्कन्ध के ऊपर कण्ठ के पास से शिर बीच में निकाल दहिने हाथ के नीचे बगल में निकाल कटि तक धारण करावे । तत्पश्चात् बालक को अपने दहिने ओर साथ बैठाके ईश्वर की **स्तुतिप्रार्थनोपासना, स्वस्तिवाचन** और **शान्तिकरण** का पाठ करके **समिदाधान अग्न्याधान** कर **(ओम् अदितेऽनुमन्यस्व०)** इत्यादि पूर्वोक्त चार मन्त्रों से पूर्वोक्त रीति से कुण्ड के चारों ओर जल छिटका, पश्चात् आज्याहुति करने का आरम्भ करना ।

वेदी में प्रदीप्त हुई समिधा को लक्ष्य में धर, चमसा में आज्यस्थाली से घी ले, **आघारावाज्यभागाहुति** ४ चार, और **व्याहृति आहुति** ४ चार तथा पृष्ठ २२–२३ में लिखे प्रमाणे **आज्याहुति** ८ आठ, तीनों मिलके १६ सोलह घृत की आहुति देके, पश्चात् बालक के हाथ से प्रधानहोम, जो विशेष शाकल्य बनाया हो, उस की आहुतियाँ निम्नलिखित मन्त्रों से दिलानी–**(ओं भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि०)** पृष्ठ २१–२२ में लिखे प्रमाणे ४ चार आज्याहुति देवें । तत्पश्चात्–

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयम् ।
तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात् सत्यमुपैमि स्वाहा ॥
इदमग्नये इदन्न मम ॥१॥
ओं वायो व्रतपते०* स्वाहा ॥ इदं वायवे इदन्न मम ॥२॥
ओं सूर्य व्रतपते० स्वाहा ॥ इदं सूर्याय इदन्न मम ॥३॥
ओं चन्द्र व्रतपते० स्वाहा ॥ इदं चन्द्राय इदन्न मम ॥४॥
ओं व्रतानां व्रतपते० स्वाहा ॥
इदमिन्द्राय व्रतपतये इदन्न मम ॥५॥

इन ५ पांच मन्त्रों से ५ पांच आज्याहुति दिलानी । उस के पीछे पृष्ठ २१ में लिखे प्रमाणे व्याहृति आहुति ४ चार और पृष्ठ २१ में लिखे

* इसके आगे 'व्रतं चरिष्यामि' इत्यादि सम्पूर्ण मन्त्र बोलना चाहिए ।

प्रमाणे स्विष्टकृत् आहुति १ एक और पृष्ठ २१ में लिखे प्रमाणे प्राजापत्याहुति १ एक, ये सब मिलके ६ छह घृत की आहुति देनी। सब मिलके १५ पन्द्रह आहुति बालक के हाथ से दिलानी ।

उसके पश्चात् आचार्य यज्ञकुण्ड के उत्तर की ओर पूर्वाभिमुख बैठे । और बालक आचार्य के सम्मुख पश्चिम में मुख करके बैठे। तत्पश्चात् आचार्य बालक की ओर देखके—

ओम् आगन्त्रा समगन्महि प्र सुमर्त्यं युयोतन ।
अरिष्टाः संचरेमहि स्वस्ति चरतादयम् ॥१॥

इस मन्त्र का जप करे ।

माणवकवाक्यम्—''ओं ब्रह्मचर्यमागामुप मा नयस्व'' ।

आचार्योक्तिः—''को नामासि[1] ?''

बालकोक्तिः—''एतन्नामास्मि[2] ।''

तत्पश्चात्—

ओम् आपो॒ हि ष्ठा म॑यो॒भुव॒स्ता न॑ऽ ऊ॒र्जे द॑धातन ।
म॒हे रणा॑य॒ चक्ष॑से ॥१॥
यो व॑ः शि॒वत॑मो॒ रस॒स्तस्य॑ भाजयते॒ह न॑ः ।
उ॒श॒तीरि॑व मा॒तर॑ः ॥२॥
तस्मा॒ऽ अर॑ं गमाम वो॒ यस्य॒ क्षया॑य॒ जिन्व॑थ ।
आपो॑ ज॒नय॑था च नः ॥३॥

इन ३ तीन मन्त्रों को पढ़के बटुक की दक्षिण हस्ताञ्जलि शुद्धोदक से भरनी ।

तत्पश्चात् आचार्य अपनी हस्ताञ्जलि भरके—

ओं तत्स॑वि॒तुर्वृ॑णीमहे व॒यं दे॒वस्य॒ भोज॑नम् ।
श्रेष्ठ॑ं सर्व॒धात॑मं॒ तुरं॒ भग॑स्य धीमहि ॥

इस मन्त्र को पढ़के आचार्य अपनी अञ्जलि का जल बालक की अञ्जलि में छोड़के, बालक की हस्ताञ्जलि अङ्गुष्ठसहित पकड़के—

ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णाम्यसौ* ॥

---

१. तेरा नाम क्या है, ऐसा पूछना ।

२. मेरा यह नाम है ।

* 'असौ' इस पद के स्थान में बालक का सम्बोधनान्त नामोच्चारण सर्वत्र करना चाहिए ।

इस मन्त्र को पढ़के बालक की हस्ताञ्जलि का जल नीचे पात्र में छुड़ा देना । इसी प्रकार दूसरी वार, अर्थात् प्रथम आचार्य अपनी अञ्जलि भर, बालक की अञ्जलि में अपनी अञ्जलि का जल भरके, अङ्गुष्ठसहित हाथ पकड़के दूसरी वार–

ओं सविता ते हस्तमग्रभीत्, असौ* ॥

इस मन्त्र से पात्र में छुड़वा दे । पुनः इसी प्रकार तीसरी वार आचार्य अपने हाथ में जल भर, पुनः बालक की अञ्जलि में भर, अङ्गुष्ठसहित हाथ पकड़के–

ओम् अग्निराचार्यस्तव, असौ* ॥

तीसरी वार बालक की अञ्जलि का जल छुड़वाके, बाहर निकल सूर्य के सामने खड़े रह देखके आचार्य–

ओं देव सवितरेष ते ब्रह्मचारी तं गोपाय समामृत ॥

इस एक और पृष्ठ ५४ में लिखे प्रमाणे **(तच्चक्षुर्देवहितम्०)** इस दूसरे मन्त्र को पढ़के बालक को सूर्यावलोकन करा, बालक सहित आचार्य सभामण्डप में आ, यज्ञकुण्ड की उत्तरबाजू की ओर बैठके–

ओं युवा॑ सु॒वासा॒ः परि॑वीत॒ आगा॒त् स उ॒ श्रेया॑न् भवति॒ जाय॑मानः ॥

ओं सूर्यस्यावृतमन्वावर्त्तस्व, असौ* ॥

इस मन्त्र को पढ़े । और बालक आचार्य की प्रदक्षिणा करके आचार्य के सम्मुख बैठे। पश्चात् आचार्य बालक के दक्षिण स्कन्ध पर अपने दक्षिण हाथ से स्पर्श, और पश्चात् अपने हाथ को वस्त्र से आच्छादित करके–

ओं प्राणानां ग्रन्थिरसि मा विस्त्रसोऽन्तक इदं ते परिददामि, अमुम्* ॥१॥

इस मन्त्र को बोलने के पश्चात्–

ओम् अहुर इदं ते परिददामि, अमुम्* ॥२॥

इस मन्त्र से उदर पर । और–

ओं कृशन इदं ते परिददामि, अमुम्* ॥३॥

इस मन्त्र से हृदय ।

ओं प्रजापतये त्वा परिददामि, असौ* ॥४॥

इस मन्त्र को बोलके दक्षिण स्कन्ध । और–

---

* 'असौ' और 'अमुम्' इन दोनों पदों के स्थान में सर्वत्र बालक का नामोच्चारण करना चाहिए ।

ओं देवाय त्वा सवित्रे परिददामि, असौ ॥५॥

इस मन्त्र को बोलके वाम हाथ से बायें स्कन्धा पर स्पर्श करके, बालक के हृदय पर हाथ धरके–

ओं तं धीरा॑सः क॒वय॒ उन्न॑यन्ति स्वा॒ध्यो॒३॑ मन॑सा दे॒वयन्तः॑ ॥६॥

इस मन्त्र को बोलके आचार्य सम्मुख रहकर बालक के दक्षिण हृदय पर अपना हाथ रखके–

ओं मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनुचित्तं ते अस्तु ।
मम वाचमेकमना जुषस्व बृहस्पतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम् ॥

आचार्य इस प्रतिज्ञामन्त्र को बोले ।

अर्थात्–'हे शिष्य बालक ! तेरे हृदय को मैं अपने आधीन करता हूं । तेरा चित्त मेरे चित्त के अनुकूल सदा रहे । और तू मेरी वाणी को एकाग्र मन हो प्रीति से सुनकर उसके अर्थ का सेवन किया कर। और आज से तेरी प्रतिज्ञा के अनुकूल बृहस्पति परमात्मा तुझ को मुझ से युक्त करे । यह प्रतिज्ञा करावे ।

इसी प्रकार शिष्य भी आचार्य से प्रतिज्ञा करावे कि–हे आचार्य! आपके हृदय को मैं अपनी उत्तम शिक्षा और विद्या की उन्नति में धारण करता हूं । मेरे चित्त के अनुकूल आपका चित्त सदा रहे। आप मेरी वाणी को एकाग्र होके सुनिये । और परमात्मा मेरे लिये आप को सदा नियुक्त रखे ।

इस प्रकार दोनों प्रतिज्ञा करके–

आचार्योक्तिः–को नामाऽसि ?

तेरा नाम क्या है ?

बालकोक्तिः–[असौ] अहम्भोः ।

मेरा अमुक नाम है । ऐसा उत्तर देवे ।

आचार्यः–कस्य ब्रह्मचार्यसि ?

तू किस का ब्रह्मचारी है ?

बालकः–भवतः ।

आपका ।

आचार्य बालक की रक्षा के लिये–

इन्द्रस्य ब्रह्मचार्यस्यग्निराचार्यस्तवाहमाचार्यस्तव असौ* ॥

इस मन्त्र को बोले । तत्पश्चात्–

---

* 'असौ' इस पद के स्थान में सर्वत्र बालक का नामोच्चारण करना चाहिए।

ओं कस्य ब्रह्मचार्यसि प्राणस्य ब्रह्मचार्यसि कस्त्वा कमुपनयते काय त्वा परिददामि ।।१।।

ओं प्रजापतये त्वा परिददामि । देवाय त्वा सवित्रे परिददामि। अद्भ्यस्त्वौषधीभ्यः परिददामि । द्यावापृथिवीभ्यां त्वा परिददामि। विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परिददामि । सर्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्यः परिददाम्यरिष्ट्यै ।।२।।

इन मन्त्रों को बोल बालक को शिक्षा करे कि—'तू प्राण आदि की विद्या के लिये यत्नवान् हो' ।

यह उपनयन संस्कार पूरे हुए पश्चात् यदि उसी दिन वेदारम्भ करने का विचार पिता और आचार्य का हो तो उसी दिन करना । और जो दूसरे दिन का विचार हो तो पृष्ठ २३-२४ में लिखे प्रमाणे महावामदेव्यगान करके संस्कार में आई हुई स्त्रियों का बालक की माता, और पुरुषों का बालक का पिता सत्कार करके विदा करे। और माता-पिता आचार्य सम्बन्धी इष्ट मित्र सब मिलके—

'ओं त्वं जीव शरदः शतं वर्द्धमानः, आयुष्मान्, तेजस्वी, वर्चस्वी भूयाः।।'

इस प्रकार आशीर्वाद देके अपने-अपने घर को सिधारें ।।

।। इत्युपनयनसंस्कारविधिः समाप्तः ।।